आचार्य अकलंकदेव

जीवन-परिचय : आचार्य समन्तभद्र यदि जैनन्याय के दादा हैं तो अकलंकदेव पिता हैं। ये बड़े प्रखर तार्किक और दार्शनिक थे।

अकलंकदेव प्रतिभा सम्पन्न, महावादी, ग्रन्थकार और युगप्रवर्तक विद्वान आचार्य थे। ये जैनन्याय या दर्शन के उन प्रतिष्ठापक विद्वानों में से हैं, जिन्होंने दार्शनिक क्रान्ति के समय समन्तभद्र और सिद्धसेन के साहित्य से प्राप्त भूमिका या आगम की परिभाषाओं को दार्शनिक रूप देकर न्याय का प्रतिष्ठापन किया। ये जैनदर्शन के तलदृष्टा और भारतीय दर्शनों के प्रकाण्ड पंडित थे। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। वे अपने समय के युगनिर्माता महापुरुष थे। अकलंकदेव के सम्बन्ध में श्रवणबेलगोला के अभिलेखों में अनेक स्थानों पर वर्णन किया है, अभिलेख संख्या 47 में लिखा है कि—

''षट्तर्केणाकलंकदेवविबुधः साक्षादयं भूतले''।

अर्थात् अकलंकदेव षट्दर्शन और तर्कशास्त्र में इस पृथ्वी पर साक्षात् विबुध अर्थात् (बृहस्पतिदेव) थे। वे अनेक शास्त्रार्थों के विजेता कवि थे।

शिलावाक्यों में उन्हें तर्कभूवल्लभ, महर्धिक, समस्तवादिकरीन्द्र-दर्पोन्मूलक, अकलंघी, बौद्धबुद्धि-वैधव्यदीक्षागुरु, स्याद्वादकेसरसटाशततीव्रमूर्तिपञ्चानन, अशेषकुतर्कविभ्रमतयोनिर्मूलोन्मूलक, अकलंक भानु, अचिन्त्यमहिमा और सकलतार्किकचक्रचूड़ामणिमरीचि आदि महान विशेषणों से विभूषित किया है।

मान्यखेट नगर के राजा शुभतुंग के मन्त्री पुरुषोत्तम के दो पुत्र थे—एक अकलंक और दूसरा निकलंक। एक बार अष्टाह्निका पर्व में माता पिता के साथ वे दोनों भाई जैन गुरु रविगुप्त के पास गये। माता-पिता ने उक्त पर्व में ब्रह्मचर्य व्रत लिया और अपने बालकों को भी दिलाया। जब वे युवा हुए तब अपने ब्रह्मचर्य व्रत को यावज्जीवन व्रत मानकर उन्होंने विवाह नहीं करवाया। पिता ने समझाया कि वह प्रतिज्ञा तो केवल अष्टाह्निका पर्व के लिए थी, पर वे कुमार अपनी बात पर दृढ़

रहे और उन्होंने आजन्म ब्रह्मचारी रह कर अपना समय शास्त्राभ्यास में लगाया। अकलंक एकसन्धि और निकलंक द्विसन्धि थे अर्थात् उनकी बुद्धि इतनी प्रखर थी कि अकलंक को एक बार सुनने मात्र से पाठ याद हो जाता था और उसी पाठ को दो बार सुनने से निकलंक को स्मरण हो जाता था। उस समय जैन धर्म पर होनेवाले बौद्धों के आक्षेपों से उनका चित्त विचलित हो रहा था। और वे इसके प्रतीकारार्थ बौद्ध शास्त्रों का अध्ययन करने के लिये बाहर निकल पड़े। वे अपना धर्म छिपाकर एक बौद्ध मठ में विद्याध्ययन करने लगे। एक दिन गुरुजी के अशुद्ध पाठ को अकलंक ने शुद्ध कर दिया। शुद्ध पाठ को देखकर गुरुजी को सन्देह हो गया कि कोई जैन यहाँ छिप कर पढ़ रहा है। इसी की खोज के सिलसिले में एक दिन गुरु ने सब शिष्यों को जैनमूर्ति को लांघने की आज्ञा दी। अकलंकदेव मूर्ति पर एक धागा डाल कर उसे लांघ गये और इस संकट से बच गये। एक रात्रि में गुरु ने अचानक अकलंक के मुख से 'णमो अरहंताणं,आदि पंच नमस्कार मन्त्र सुन लिया। तब गुरुजी ने दोनों भाइयों को पकड़कर मठ की ऊपरी मंजिल में कैद कर दिया। एक दिन दोनों भाई किसी तरह ऊपर से कूद कर भाग निकले। राजा को ज्ञात होने पर उन्हें पकड़ने अश्वारोही सैनिक भेज दिये। सैनिकों को देखकर निकलंक ने बड़े भाई को तालाब में छुपने की विनती की, जिससे जिनशासन की प्रभावना हो सके। आखिर दुखी होकर अकलंक ने तालाब में छिपकर अपने प्राणों की रक्षा की। निकलंक आगे भागने लगे। उसके साथ एक अनजान व्यक्ति भी अज्ञात भय की आशंका से निकलंक के साथ ही भागने लगा। घुड़सवारों ने आकर दोनों को मार दिया।

अकलंक वहाँ से चल कर कलिंग देश के नगर रत्नसंचयपुर पहुँचे। वहाँ के राजा हिमशीतल की रानी मदनसुन्दरी का अष्टाह्निका पर्व के दिनों में जैन रथ निकलवाया। उन्होंने जैनधर्म की प्रभावना के लिए बौद्ध धर्म की तारादेवी से शास्त्रार्थ किया और उन्हें हराकर जैनधर्म की महती प्रभावना करवाई। जनता के हृदय में जैनधर्म के प्रति आस्था बढ़ी। रानी भी अपने संकल्प को पूर्ण कर प्रसन्न हुई।

अनेक विद्वानों के मत एवं अकलंक देव के द्वारा रचित ग्रन्थों के आधार पर इनका समय सातवीं शती का उत्तरार्द्ध सिद्ध होता है। कुछ प्रमाणों के आधार पर अकलंकदेव का समय ई. 720 से 780 तक सिद्ध होता है।

रचना-परिचय : अकलंकदेव की रचनाओं को दो वर्गों में विभक्त किया जा सकता है- मौलिक और टीका-ग्रन्थ। उनके मौलिक ग्रन्थ हैं—

1. **लघीयस्त्रय :** लघीयस्त्रय में तीन छोटे-छोटे प्रकरणों का संग्रह है— 1. प्रमाण-प्रवेश 2. नयप्रवेश 3. निक्षेप प्रवेश। इसमें कुल 78 मूल कारिकाएँ हैं। अकलंकदेव ने लघीयस्त्रय पर एक विवृत्ति भी लिखी है। विवृत्ति अर्थात् विशेष विवरण। लघीयस्त्रय में 6 परिच्छेद (अध्याय) हैं।

2. **न्यायविनिश्चय सवृत्ति :** इस ग्रन्थ में 480 श्लोक हैं और तीन परिच्छेद हैं—प्रत्यक्ष, अनुमान और प्रवचन। अकलंक देव ने इस पर भी चूर्णि या वृत्ति लिखी है।

3. **सिद्धिविनिश्चय :** अकलंकदेव की यह महत्त्वपूर्ण कृति है। इसमें 12 प्रस्ताव हैं, जिनमें प्रमाण, नय और निक्षेप का वर्णन किया गया है।

4. **प्रमाणसंग्रह सवृत्ति :** इस ग्रन्थ का जैसा नाम है तदनुसार उसमें प्रमाणों का संग्रह है। इस ग्रन्थ की भाषा और विषय दोनों ही कठिन हैं। प्रमाण संग्रह में 9 प्रस्ताव और साढ़े सतासी 87 $^{1}/_{2}$ कारिकाएँ हैं। कारिकाओं के अतिरिक्त पूरक वृत्ति भी लिखी है। यह ग्रन्थ अपनी खास विशेषता रखता है। यह ग्रन्थ अकलंक ग्रन्थमाला में प्रकाशित है। अकलंकदेव की जैन न्याय को अपूर्व देन है यह ग्रन्थ।

टीकाग्रन्थ : 1. तत्त्वार्थवार्तिक सभाष्य : यह ग्रन्थ तत्त्वार्थसूत्र की व्याख्या होने के कारण दस अध्यायों में विभक्त है। इसका विषय भी तत्त्वार्थसूत्र के समान सैद्धान्तिक और दार्शनिक है। तत्त्वार्थसूत्र के प्रत्येक सूत्र पर वार्तिकरूप में व्याख्या लिखे जाने के कारण यह तत्त्वार्थवार्तिक कही गयी है। वार्तिक श्लोकात्मक भी होते हैं और गद्यात्मक भी। तत्त्वार्थवार्तिक की एक प्रमुख विशेषता यह है कि जितने भी मन्तव्य उसमें लिखे गये हैं, उन सबका समाधान अनेकान्त के द्वारा किया गया है।

2. **अष्टशती देवागमविवृत्ति :** जैनदर्शन अनेकान्तवादी दर्शन है। आचार्य समन्तभद्र अनेकान्तवाद के सबसे बड़े व्यवस्थापक हैं। उन्होंने आप्तमीमांसा नामक ग्रन्थ द्वारा उसकी व्यवस्था की है। इसी आप्तमीमांसा पर अकलंकदेव ने अपनी 'अष्टशती' वृत्ति लिखी है। इस वृत्ति का प्रमाण 800 श्लोक हैं, अतः यह अष्टशती कहलाती है।